लखन साव (मृत) अब अपने विधिक
उत्तराधिकारियों के माध्यम से

बनाम

धरमु चौधरी

20 फरवरी, 1991

[बी. सी. रे एवं एम. फातिमा बीवी, न्यायमूर्तिगण]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908: स्वामित्व एवं कब्जे की घोषणा के लिए मुकदमा - स्वामित्व साबित करने का भार वादी पर होता है - लेकिन जब वादी एवं प्रतिवादी दोनों साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं तो सबूत के भार का प्रश्न महत्वपूर्ण नहीं होता - न्यायालय अभिलेख में मौजूद संपूर्ण साक्ष्य पर विचार कर सकता है।

उत्तरदाता-वादी ने श्रीमती टी द्वारा 10 फरवरी, 1964 को उनके पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर वाद संपत्ति पर स्वामित्व एवं कब्जे की घोषणा के लिए अपीलकर्ता-प्रतिवादी के विरुद्ध मुकदमा दायर किया। अपीलकर्ता-प्रतिवादी ने श्रीमती टी द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित 14 फरवरी, 1959 के एक पूर्व विलेख के तहत भी अपने स्वामित्व एवं कब्जे का दावा किया। उत्तरदाता ने तर्क दिया कि प्रतिवादी के पक्ष में 1959 का विलेख फर्जी एवं बिना किसी प्रतिफल के था। विचारण न्यायालय ने मुकदमे का फैसला सुनाया एवं अपील में फैसले की पुष्टि की गई। उच्च न्यायालय ने फैसले को निरस्त कर दिया एवं मामले को प्रथम अपीलीय न्यायालय को वापस भेज दिया, यह कहते हुए कि 1959 के विलेख को फर्जी साबित करने का भार वादी पर है। वापस भेजे जाने के बाद, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर विचार किया एवं वादी के स्वामित्व को बरकरार रखते हुए विचारण न्यायालय के फैसले की पुष्टि की। फैसले के विरुद्ध दायर दूसरी अपील को उच्च न्यायालय ने *प्रारंभिक चरण* में ही खारिज कर दिया गया।

प्रतिवादी ने इस न्यायालय में अपनी अपील में यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय द्वारा पुनर्विचार के आदेश में स्पष्ट निर्देश दिए जाने के बावजूद कि 1959 के विलेख को फर्जी साबित करने का भार वादी पर था, वादी द्वारा इस भार को पूरा करने के लिए कोई नया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया एवं अपीलीय न्यायालय ने प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच की एवं उसे अस्वीकार कर दिया; अतः अपीलीय न्यायालय ने अपील का निपटारा करने में त्रुटि की जिससे विधि का एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न हुआ एवं उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील को *प्रारंभिक चरण* में ही खारिज करने में दी.प्र.सं. की धारा 100 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा।

अपील खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने निर्णय दिया:

1. जहां साक्ष्य प्रस्तुत करने का दायित्व वादी पर हो, वहां प्रतिवादी के पास साक्ष्य प्रस्तुत न करने का विकल्प हमेशा खुला रहता है, लेकिन साक्ष्य प्रस्तुत करने के बाद, वह न्यायालय से यह अनुरोध नहीं कर सकता कि वह उस पर विचार न करे एवं उस पर कार्रवाई न करे। जब दोनों पक्षों ने साक्ष्य प्रस्तुत कर दिए हों, तो मामले के अंत में साक्ष्य प्रस्तुत करने के दायित्व का प्रश्न कोई विशेष महत्व नहीं रखता एवं न्यायालय को सभी सामग्रियों पर विचार करने के बाद निर्णय लेना होता है।[515 एच; 516 ए]

2. स्वामित्व पर आधारित मुकदमे में, स्वामित्व साबित करने का भार निस्संदेह वादी पर था। जब वादी ने उसी भूमि के संबंध में अपने विक्रेता द्वारा निष्पादित पूर्व विलेख को चुनौती दी, तो उसे यह साबित करना था कि यह *फर्जी केबाला* था एवं बिना प्रतिफल के किया गया एक दिखावटी लेन-देन था। लेकिन यह जांच करते समय कि क्या वादी इस नकारात्मक तथ्य को साबित करने में सफल रहा है, न्यायालय के लिए अभिलेख में मौजूद संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करना उचित था, क्योंकि दोनों पक्षों ने साक्ष्य प्रस्तुत किए थे एवं साक्ष्य का कोई भी भाग छोड़ा नहीं जा सकता था। वादी ने इस आधार पर कार्यवाही की कि उसके विक्रेता द्वारा 1959 में निष्पादित विलेख फर्जी था, प्रतिफल का अभाव था एवं वह

कभी लागू नहीं हुआ, इस प्रकार उसने अपने स्वामित्व के समर्थन में आवश्यक तथ्य प्रस्तुत किए। अपने आरोपों को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। दावे का खंडन करने के लिए, प्रतिवादियों ने दावा किया कि विलेख के तहत प्रतिफल का भुगतान किया गया था एवं इसके विपरीत साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। अपीलीय न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य का पूर्णतः विश्लेषण किया एवं निष्कर्ष दर्ज किए। इस प्रकार अपीलीय न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य के स्पष्ट विश्लेषण के आधार पर निश्चित निष्कर्ष दर्ज किए एवं ये निष्कर्ष अभिलेख में मौजूद साक्ष्यों द्वारा पूर्णतः समर्थित हैं। अतः, माननीय न्यायाधीश ने अपने दृष्टिकोण में कोई त्रुटि नहीं की है। [597 सी-डी; 599 बी-सी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: वर्ष 1986 का दीवानी अपील संख्या 1440

पटना उच्च न्यायालय के वर्ष 1983 के द्वितीय अपील संख्या 129 में दिनांक 30.11.1985 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ताओं की ओर से - रंजन द्विवेदी, ए.एन. बरदियार एवं आर.एस. शर्मा

उत्तरदाता की ओर से - डी. गोबर्धन एवं डी.एन. गोबर्धन

न्यायालय का निर्णय **न्यायमूर्ति फातिमा बीवी** द्वारा सुनाया गया

वादी-उत्तरदाता ने 1968 में गौरीपुर गांव के खाता संख्या 19 में स्थित भूमि पर कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया, जिसमें उसने मूल स्वामी छथू साह की विधवा मोसमात तेतरी द्वारा 10 फरवरी, 1964 को उसके पक्ष में निष्पादित किए गए बिक्री विलेख (प्रदर्श 2) के तहत स्वामित्व का दावा किया। मोसमात तेतरी ने इससे पहले 14 फरवरी, 1959 को अपने भाई के बेटे लखन साव के पक्ष में 600 रुपये के प्रतिफल के लिए प्रदर्श 2-ए विक्रय विलेख निष्पादित किया था। उन्होंने 31 जुलाई, 1962 को उत्तरदाता के पक्ष में संपत्ति हस्तांतरित करने से पहले इस विलेख को निरस्त कर दिया। 11 जुलाई, 1963 की कार्यवाही द्वारा उन्होंने अपने नाम पर उत्परिवर्तन प्राप्त किया एवं 18 जुलाई, 1963 को किराया अदा किया। हालांकि, उत्तरदाता एवं लखन साव के बीच भूमि के कब्जे को लेकर विवाद उत्पन्न हुआ,

जिसके कारण दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही शुरू हुई। 4 मार्च, 1966 के आदेश द्वारा लखन साव एवं उनके भाई गुलाब साव (जो इस मामले में अपीलकर्ता हैं) को कब्जा दे दिया गया। इसके बाद उत्तरदाता ने अपने स्वामित्व एवं कब्जे की घोषणा के लिए वर्तमान वाद दायर किया।

उत्तरदाता ने आरोप लगाया कि लखन साव के पक्ष में 1959 का विलेख *फर्जी केबाला* था, जो बिना प्रतिफल के निष्पादित किया गया था एवं प्रभावी नहीं था, तथा उत्तरदाता ने अपने पक्ष में हुए हस्तांतरण के तहत वैध स्वामित्व प्राप्त कर लिया था। वादी के स्वामित्व को नकारते हुए एवं यह दावा करते हुए कि स्वामित्व एवं कब्ज़ा 1959 के विलेख के तहत हस्तांतरित हुआ था, वाद का विरोध किया गया। विचारण न्यायालय ने वाद को स्वीकार कर लिया एवं अपील में इस निर्णय की पुष्टि की गई। उच्च न्यायालय ने निर्णय को निरस्त कर दिया एवं मामले को प्रथम अपीलीय न्यायालय को वापस भेज दिया, यह बताते हुए कि यह साबित करने का भार कि 1959 का दस्तावेज़ फर्जी प्रकृति का था एवं अप्रभावी रहा, स्पष्ट रूप से वादी पर था एवं प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय कानून की गलत समझ से दूषित था। वापसी के बाद, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने 31 जनवरी, 1983 को दिए गए फैसले से अपील का निपटारा किया, जिसमें वादी के स्वामित्व को बरकरार रखा गया एवं विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि की गई। उस फैसले के खिलाफ दायर दूसरी अपील को उच्च न्यायालय ने *प्रारंभिक चरण* में ही खारिज कर दिया। 30.11.1985. विशेष अनुमति से दायर यह अपील उच्च न्यायालय के उस फैसले के खिलाफ है।

अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री रंजन द्विवेदी ने तर्क दिया कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपील का निपटारा करते समय वही त्रुटि दोहराई जो उच्च न्यायालय ने पहले ही इंगित की थी, एवं इस त्रुटि से विधि का एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न हो गया है। उच्च न्यायालय ने प्रारंभिक चरण में ही अपील खारिज करने में दी.प्र.सं. की धारा 100 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा। मूल प्रतिवादी की मृत्यु हो गई

है एवं उनके कानूनी प्रतिनिधि इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता हैं। यह निवेदन किया गया कि अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने पुनर्विचार आदेश में दिए गए विशिष्ट निर्देश के बावजूद, 1959 के आक्षेपित विलेख को फर्जी एवं अप्रभावी लेनदेन साबित करने के लिए प्रतिवादी पर ही भार डाल दिया। वादी द्वारा यह साबित करने के लिए कोई नया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया कि दस्तावेज़ के अंतर्गत कोई प्रतिफल नहीं दिया गया था एवं दस्तावेज़ अप्रभावी था। न्यायालय ने प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों की जांच करके निष्कर्ष निकाला और पाया कि प्रतिवादी यह साबित करने में विफल रहा है कि प्रतिफल का आदान-प्रदान हुआ था और लेन-देन प्रभावी हो गया था। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, इस दृष्टिकोण ने निर्णय को दूषित कर दिया है और न्याय का उल्लंघन हुआ है। उनका निवेदन है कि निचली अपीलीय न्यायालय ने प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर विचार किया और उन्हें अस्वीकार कर दिया। प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने बताया कि निचली अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्य के भार के संबंध में सही कानून लागू करते हुए साक्ष्यों का उचित मूल्यांकन किया था। दर्ज किए गए निष्कर्ष मामले के तथ्यों और साक्ष्यों के मूल्यांकन पर आधारित हैं और कानून का कोई प्रश्न नहीं उठता है, इसलिए दूसरी अपील को सही ढंग से खारिज कर दिया गया है।

स्वामित्व संबंधी मुकदमे में, स्वामित्व साबित करने का भार निस्संदेह वादी पर था। जब वादी ने अपने विक्रेता द्वारा उसी भूमि के संबंध में निष्पादित पूर्व विलेख को चुनौती दी, तो वादी को यह साबित करना था कि यह *फर्जी केबाला* एवं बिना प्रतिफल के किया गया एक दिखावटी लेन-देन था। विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने इस बात पर विचार किया कि वादी पर भारी भार डालने वाले इस भार को उसने किस हद तक निभाया है। उन्होंने किसी विशेष विलेख के *फर्जी केबाला* होने का पता लगाने के लिए निर्धारित विभिन्न परीक्षणों का उल्लेख किया। उन्होंने पक्षों के बीच संबंध, दस्तावेज़ की अभिरक्षा से संबंधित साक्ष्य, प्रतिफल का हस्तांतरण, उद्देश्य एवं कब्जे पर विचार किया। यह पाया गया कि लखन

साव एवं उनके भाई गुलाब साव, तेतरी से घनिष्ठ रूप से संबंधित थे, एवं प्रदर्श 2-ए विक्रय विलेख तेतरी की अभिरक्षा में था एवं इसे वादी द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था। साक्ष्यों के आधार पर यह पाया गया कि दस्तावेज़ के लिए स्टांप पेपर विक्रेता द्वारा खरीदा गया था एवं यह स्पष्ट संकेत था कि क्रेता ने दस्तावेज़ तैयार करने में भाग नहीं लिया था। उन्होंने इस तथ्य की जानकारी इस बात से प्राप्त की कि विलेख में गलत विवरण शामिल किए गए थे। उन्होंने इस तर्क को खारिज कर दिया कि एफ दस्तावेज़ वादी एवं उसके विक्रेता द्वारा गुप्त रूप से प्राप्त किए गए थे। यह देखा गया कि विलेख के निष्पादन के बाद भी, तेतरी का कब्ज़ा बना रहा। उन्होंने जमाबंदी में अपना नाम दर्ज कराने के लिए अधिकारियों से संपर्क किया एवं किराया भी चुका दिया था। विलेख के निष्पादन के उद्देश्य के संबंध में, यह पाया गया कि श्रीमती तेतरी पर कर्ज था एवं संपत्ति को लेनदारों की पहुंच से बचाने के लिए यह विलेख बिना किसी प्रतिफल के निष्पादित किया गया था। विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने प्रतिफल से संबंधित साक्ष्यों पर विचार किया। उन्होंने गवाह गवाह (अभियोजन साक्षी-8) एवं वादी (अभियोजन साक्षी-14) के साक्ष्यों का उल्लेख किया। इन गवाहों ने कहा कि प्रतिफल के रूप में कुछ भी भुगतान नहीं किया गया था। विलेख में उल्लिखित राशि के अनुसार, 500 रुपये अग्रिम भुगतान था एवं निष्पादन के समय 100 रुपये नकद भुगतान किया गया था। माननीय न्यायाधीश ने गौर किया कि नकद भुगतान के संबंध में कोई विशिष्ट बयान नहीं था। विक्रेता की मृत्यु हो चुकी थी। प्रतिवादी लखन साव गवाही देने से बच गया। अतः दस्तावेज़ के पक्षों के साक्ष्य अभिलेख में नहीं थे। लखन साव के भाई गुलाब साव को विपक्षी साक्षी-11 के रूप में पेश किया गया। उनके साक्ष्य का विश्लेषण किया गया एवं उसमें विसंगति पाई गई। माननीय न्यायाधीश ने दोनों पक्षों के साक्ष्यों पर विचार करने के बाद पाया कि अपीलकर्ता लखन साव द्वारा भुगतान के संबंध में साक्ष्य संतोषजनक नहीं है एवं अपीलकर्ताओं के साक्ष्य विश्वसनीय नहीं हैं। कुछ लेनदारों के ऋण होने की बात स्वीकार किए जाने से उद्देश्य संतोषजनक रूप से स्थापित हो गया। कब्जे

के प्रश्न पर, माननीय न्यायाधीश ने साक्ष्यों की गहन जांच की एवं पाया कि प्रदर्श 2-ए के निष्पादन के बाद भी तेतरी कब्जे में था। इन तत्वों को वादी के पक्ष में पाते हुए, माननीय न्यायाधीश ने निष्कर्ष निकाला कि तेतरी द्वारा 14.2.1959 को निष्पादित प्रदर्श 2-ए केवल बिना किसी प्रतिफल के *फर्जी केबाला* था एवं इससे अपीलकर्ताओं को कोई स्वामित्व या कब्जा प्राप्त नहीं हुआ।

ये निष्कर्ष मूलतः तथ्यों पर आधारित हैं। हालाँकि, यदि अपीलकर्ता यह सिद्ध करने में सफल होते हैं कि तथ्यों पर निष्कर्ष दर्ज करते समय न्यायालय ने दायित्व के संबंध में कानून की गलत अवधारणा का पालन किया है, तो निष्कर्षों की सत्यता की जाँच करना आवश्यक हो जाता है। हमारे समक्ष केवल यही बात उठाई गई है कि निचली अपीलीय न्यायालय ने गलत तरीके से यह मान लिया है कि प्रतिफल के आदान-प्रदान को सिद्ध करने का दायित्व प्रतिवादी पर आ गया है एवं साक्ष्यों से यह तथ्य सिद्ध नहीं होता है। यह तर्क दिया गया कि दायित्व का हस्तांतरण नहीं हुआ क्योंकि यह सिद्ध करने का भार पूरी तरह से वादी पर था कि दस्तावेज़ अप्रभावी था एवं उसके तहत कोई प्रतिफल नहीं दिया गया था। हमने पहले ही उल्लेख किया है कि उच्च न्यायालय ने निचली अपीलीय न्यायालय द्वारा की गई त्रुटि को इंगित करते हुए पूर्ववर्ती निर्णय को रद्द कर दिया है। उच्च न्यायालय द्वारा की गई इस टिप्पणी को अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने बाद में अपील का निपटारा करते समय ध्यान में रखा है। विद्वान न्यायाधीश ने यह साबित करने के भार के प्रश्न पर विचार किया है कि कोई प्रतिफल नहीं दिया गया था। यह जांच करते समय कि क्या वादी नकारात्मक तथ्य को सिद्ध करने में सफल रहा है, न्यायालय के लिए अभिलेख में मौजूद संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करना उचित था क्योंकि दोनों पक्षों ने साक्ष्य प्रस्तुत किए थे एवं साक्ष्य का कोई भी भाग छोड़ा नहीं जा सकता था। संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के बाद, न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिफल दिया गया था। इसलिए, इस निष्कर्ष को त्रुटिपूर्ण नहीं कहा जा सकता है।

जहां साक्ष्य प्रस्तुत करने का दायित्व वादी पर हो, वहां प्रतिवादी के पास साक्ष्य प्रस्तुत न करने का विकल्प हमेशा खुला रहता है, लेकिन साक्ष्य प्रस्तुत करने के बाद वह न्यायालय से यह अनुरोध नहीं कर सकता कि वह उस पर विचार न करे एवं उस पर कार्रवाई न करे। जब दोनों पक्ष साक्ष्य प्रस्तुत कर चुके हों, तो मामले के अंत में साक्ष्य प्रस्तुत करने के दायित्व का प्रश्न कोई विशेष महत्व नहीं रखता एवं न्यायालय को सभी तथ्यों पर विचार करने के बाद ही निर्णय लेना होता है।

वर्तमान वाद में, वादी ने इस आधार पर कार्यवाही की कि उसके विक्रेता द्वारा 1959 में निष्पादित विलेख फर्जी था, प्रतिफल का अभाव था एवं वह कभी लागू नहीं हुआ। इस प्रकार उसने अपने स्वामित्व के समर्थन में आवश्यक तथ्य प्रस्तुत किए। आरोप को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। दावे का खंडन करने के लिए, प्रतिवादियों ने दावा किया कि विलेख के तहत प्रतिफल का भुगतान किया गया था एवं इसके विपरीत साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य का पूर्णतः विश्लेषण किया एवं निष्कर्ष दर्ज किए। हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि माननीय न्यायाधीश ने अपने दृष्टिकोण में कोई त्रुटि की है। उन्होंने संपूर्ण साक्ष्य के स्पष्ट विश्लेषण के आधार पर निश्चित निष्कर्ष दर्ज किए हैं एवं ये निष्कर्ष अभिलेख में मौजूद साक्ष्यों द्वारा पूर्णतः समर्थित हैं। अतः हमें अपील में कोई योग्यता नहीं दिखती, जिसे तदनुसार खारिज किया जाता है। कोई लागत नहीं।

टी.एन.ए. अपील खारिज कर दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।